ISSN: 3048-9423(Online)
Naveen International Journal of Multidisciplinary Sciences (NIJMS)
© NIJMS | Vol. 1 | Issue 4 | Feb-Mar 2025
Available online at: https://nijms.com/

पर्यावरण संरक्षण के सन्दर्भ में भारतीय दर्शन

डॉ ममता शर्मा

असि०प्रो० भूगोल, अ०प्र०ब०रा०स्ना० महाविद्यालय अगस्त्यमुनि(रुद्रप्रयाग)

corresponding author Emai: vasu.smahi@gmail.com

शोध सारांश

प्रस्तुत शोधपत्र में पर्यावरण संरक्षण के संदर्भ में भारतीय दार्शनिक परंपरा की गहन समीक्षा प्रस्तुत की गई है। वैदिक काल से लेकर आधुनिक युग तक भारतीय दर्शन में प्रकृति और मानव के मध्य सामंजस्यपूर्ण संबंध स्थापित करने के सिद्धांत निहित हैं। इस अध्ययन में वेदों, उपनिषदों, पुराणों, गीता तथा विभिन्न दार्शनिक सम्प्रदायों में वर्णित पर्यावरणीय चेतना का विश्लेषण किया गया है। अनुसंधान पद्धति के रूप में तुलनात्मक अध्ययन, ग्रंथीय समीक्षा तथा विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण अपनाया गया है। निष्कर्षों से स्पष्ट होता है कि भारतीय दर्शन में पंचमहाभूत सिद्धांत, वसुधैव कुटुम्बकम की भावना, अहिंसा का सिद्धांत तथा सर्वे भवन्तु सुखिनः की अवधारणा के माध्यम से एक समग्र पारिस्थितिकी दर्शन प्रस्तुत किया गया है। यह शोध दर्शाता है कि समसामयिक पर्यावरणीय संकट के समाधान में भारतीय दार्शनिक मूल्य अत्यंत प्रासंगिक और उपयोगी हैं।

मुख्य शब्द: *पर्यावरण संरक्षण, भारतीय दर्शन, पंचमहाभूत, वैदिक परंपरा, पारिस्थितिकी चेतना, अहिंसा।*

परिचय-

21वीं सदी में पर्यावरण संरक्षण मानवता के समक्ष सबसे गंभीर चुनौती बनकर उभरा है। जलवायु परिवर्तन, वन विनाश, जैव विविधता का ह्रास, वायु और जल प्रदूषण जैसी समस्याओं ने धरती के अस्तित्व को खतरे में डाल दिया है। इस संकट के समाधान हेतु विश्व भर में वैज्ञानिक, राजनीतिक और सामाजिक प्रयास किए जा रहे हैं, परंतु केवल तकनीकी समाधान पर्याप्त नहीं है। आवश्यकता है एक ऐसे दार्शनिक आधार की जो मानव और प्रकृति के मध्य सामंजस्य स्थापित कर सके। भारतीय दर्शन की सहस्राब्दियों पुरानी परंपरा में पर्यावरण संरक्षण के मूलभूत सिद्धांत निहित हैं। वैदिक ऋषियों से लेकर आधुनिक चिंतकों तक सभी ने प्रकृति को मातृवत् माना है और उसके संरक्षण को धर्म का अंग बताया है। यह शोधपत्र इसी दार्शनिक धरोहर की पड़ताल करता है।

मानव प्रगति के इतिहास का अवलोकन और विवेचन करने पर समझा जा सकता है ज्ञातव्य होता है कि उसकी 1 प्रगति का इतिहास उसके प्राकृतिक परिवेश से उसके सामंजस्य व्यवहार की कहानी कहता है। पर्यावरण के मूल में मानव का प्रकृति के प्रति सद्भाव और सम्मानपूर्ण व्यवहार प्रमुख रहा है। पर्यावरण अपने असंख्य संगठित समुदायों के साथ मानव जीवन को खुशमल सुखमय बनाने में अपना अमूल्य योगदान देता है। यद्यपि प्राचीन समय से ही मानव पर्यावरण के महत्व से परिचित है।

वैदिक परंपरा में पर्यावरण चेतना

पहले प्रात: उठते ही सभी लोग सूर्य नमस्कार से अपनी दिनचर्या प्रारम्भ करते थे। यह उनका प्रकृति को सम्मान प्रदर्शित करने का तरीका था। पर्यावरण को संरक्षित रखने के लिए हमारे वैदिक मंत्रों में कहा गया है-

ॐ पूर्णमदः पूर्णमदं पूर्णात्पूर्णमुच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥

अर्थात मानव अपनी इच्छाओं को वश में रखकर प्रकृति से उतना ही ग्रहण करें कि उसकी पूर्णता को क्षति नहीं पहुंचे।

यजुर्वेद में भी कहा गया है –

धानाँ लेखीरन्तरिक्ष मा हि सीः पृथिका संभव
अयं हित्वा स्वधिं तिस्ते तिर्जनः
प्राणितापं पहते सौभागाय।
अतस्त्व देवं वनस्पते शतवल्सो
विरोह सहस्त्रवल्शा विवियं रुहेम॥

अर्थात वृक्षों को नहीं काटो। जल और पृथ्वी की रक्षा करना धर्म है। पृथ्वी से उतना ही भाग निकालो जिस की पूर्ति की जा सके। वेदों में पर्यावरण की गहरी समझ ही इस बात का प्रमाण है कि उसने पर्यावरण में मातृत्व को देखा मत्स्यपुराण में एक वृक्ष को दस पुत्रों के बराबर माना गया है-

दशमकूप समावापी, दशवापीस मोंहदा
दशहदसमो पुत्रोः दशपुत्रसमो वृक्षः

अर्थात दस कुओं के बराबर एक बावड़ी, दस बावड़ियों के बराबर एक तालाब तथा दस तालाब के बराबर एक पुत्र और दस पुत्रों के बराबर एक वृक्ष है।

पंचमहाभूत सिद्धांत

मानव शरीर पर्यावरणीय पंच तत्वों का योग है। इस पर्यावरण एवं शरीर के समन्वय को स्पष्ट करते हुए तुलसीदास जी ने रामचरितमानस के किष्किन्धाकाण्ड में लिखा है कि-

"क्षिति-जल पावक गगन समीरा
पंच तत्व मिली बना सरीश"।

भारतीय दर्शन में प्रकृति या पर्यावरण संरक्षण मानव जीवन का अभिन्न अंग है। इनके संरक्षण के प्रति एक गहरी और सम्मान जनक दृष्टि है। प्राचीन काल से ही भारत की सांस्कृतिक और दार्शनिक परम्परा में पर्यावरण के प्रति आदर और सम्मान को प्रमुख स्थान दिया गया है। भारतीय दर्शन में प्रकृति को न केवल एक साधन माना गया है, बल्कि इसे मानव के जीवन और आध्यात्मिक उन्नति का आधार समझा गया है। इस दर्शन में प्रकृति और मानव के बीच गहन सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास किया गया है। मानव सभ्यता के विकास का प्रत्येक युग प्रकृति में ही पल्लवित और विकसित हुआ। मानव सभ्यता के विकास की इस यात्रा में पर्यावरण संरक्षण के महत्व को लगातार समझा और जाना गया। इसी के फलस्वरूप वेदों में विशेषकर ऋग्वेद में पर्यावरण संरक्षण पर विशेष बल दिया गया है और इसे जन आंदोलनों से जोड़ा गया। इस संदर्भ में सामान्य जनों को अपने प्रकृति एवं पर्यावरण संरक्षण के निमित्त धार्मिक अनुष्ठानों, धर्म तथा मोक्ष को प्राप्त करने से जोड़ा गया। यही कारण है कि भारतीय दर्शन एवं संस्कृति की दृष्टि से वेदों का महत्व अक्षुण्ण रहा है। भारतीय दर्शन परम्परा में षड दर्शन, सांख्य योग, मीमांसा, न्याय, वैशेषिक एवं वेदान्त हैं जिन्हें आस्तिकतावादी दर्शन के नाम से भी जानते हैं, में पर्यावरण की अवधारणा को मजबूती से स्वीकार किया गया। सांख्यदर्शन में पर्यावरणीय जागरूकता की बात को तार्किक ढंग से रखा गया है। द्वैतवादी इस दर्शन में एक जड़ प्रकृति है और दूसरा चेतन है। इसमें प्रकृति भोग और कैवल्य दोनों का कारक है। इस स्वरूप में यह पूजनीय है। योग दर्शन

के अनुसार पर्यावरण क्षरण का मुख्य कारण आसक्ति और भोग की प्रवृत्ति है। इस प्रवृत्ति का नाश ही वैराग्य है। आसक्ति हीनता वस्तुतः पर्यावरण पोषण की आधारशिला है। पर्यावरणजन्य यथार्थ ज्ञान का बोध कराना न्याय दर्शन का एक विशिष्ट आयाम है।

भारतीय चिंतन में दिव्य और पूजनीय मानी गयी प्रकृति और उसके विभिन्न तत्वों की महत्ता केंद्र वर्णना उपनिषद, वेद, पुराण, महाभारत और रामायण जैसे महाकाव्य भरे हुए है। ऋग्वेद में सूर्य, पृथ्वी, जल, वायु और अग्नि को देवता के रूप में पूजनीय माना गया है। यजुर्वेद में कहा गया है-

'माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्या'

अर्थात् यह भूमि माता के समान सबका पोषण करने वाली है और मैं पुत्र के समान इस भूमि का रक्षक हूँ।

उपनिषदों में पंचमहाभूत (आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी) को मानव अस्तित्व के आधार के रूप में स्वीकार किया गया है। भगवद्गीता में श्रीकृष्ण ने कर्मयोग के माध्यम से प्रकृति के साथ संतुलन बनाये रखने पर जोर दिया है। गीता में यह विचार मिलता है कि मनुष्य को अपने कर्त्तव्यों का पालन करते हुए प्रकृति का पोषण करना चाहिए। भारतीय संस्कृति में पर्यावरण संरक्षण को व्यवहारिक रूप से स्वीकार्य किया गया है जो कि दैनिक जीवन और धार्मिक। अनुष्ठानों में स्पष्ट रूप से दिखायी भी देता है। भारतीय संस्कृति में पीपल, तुलसी, वट वृक्ष और नीम जैसे वृक्षों की पूजा की जाती है। इन वृक्षों को पर्यावरण शुद्धि और मानव कल्याण का प्रतीक माना गया है। इसी प्रकार यहाँ गंगा, यमुना, सरस्वती और कावेरी जैसी नदियों को माँ का स्थान दिया गया है। नदियों को पवित्र मानकर उनकी स्वच्छता और संरक्षण हेतु अनेक प्रयास किये जा रहे हैं। भारतीय परम्परा में गाय, हाथी, नाग सहित कई जीवों को पूजनीय माना गया है। यह मान्यता पर्यावरण के प्रति सह-अस्तित्व की भावना को बल देती है।

भारतीय दर्शन में पंचमहाभूत (पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश) को सृष्टि का आधारभूत तत्त्व माना गया है। इन पंच तत्वों के संरक्षण के बिना मानव जीवन सम्भव नहीं है। उदाहरण स्वरूप – पृथ्वी, जिसे धरती माँ कहा गया है। भूमि का अंधाधुंध दोहन करने की अपेक्षा इसे संतुलित रूप से उपयोग करने की शिक्षा दी गई है। जल को जीवन का आधार मानते हुए अथर्ववेद में जलकी शुद्धता और संरक्षण पर जोर दिया गया है। वायु को प्राण मानते हुए- प्राचीन समय में यज्ञ और हवन के माध्यम से वायु को शुद्ध करने की परम्परा थी। शक्ति और पवित्रता का प्रतीक अग्नि के संतुलित उपयोग का निर्देश दिया गया है। तो वहीं आकाश को अनंत और शुद्धता का प्रतीक माना गया है। भारतीय धार्मिक और आध्यात्मिक परम्परायें पर्यावरण संरक्षण को बढावा देती हैं। भारतीय संस्कृति का अभिन्न हिस्सा योग मनुष्य और प्रकृति के बीच सामंजस्य स्थापित करता है। योग के माध्यम से व्यक्ति प्रकृति के प्रति अपनी जिम्मेदारी को समझता है। आयुर्वेद चिकित्सा प्रणाली पूरी तरह प्रकृति पर आधारित है जो कि वनस्पतियों और जड़ी बूटियों के संरक्षण के महत्व को बतलाती है। भारतीय त्योहार जैसे वटसावित्री व्रट, नाग पंचमी, गोवर्धन पूजा आदि पर्यावरण संरक्षण की भावना को प्रकट करते हैं।इन त्योहारों के माध्यम से प्रकृति और पर्यावरण से जुड़ाव स्थापित किया जाता है।

अहिंसा का सिद्धांत

महात्मा गाँधी के अहिंसा के सिद्धान्त में भी पर्यावरण के संरक्षण के विचार निर्हित हैं। गांधी जी ने कहा था- "पृथ्वी सभी की आवश्यकताओं को पूरा कर सकती है लेकिन लालच को नहीं।" भारतीय दर्शन में संतुलित जीवन और आवश्यकता के अनुसार प्रकृति का उपयोग करने की शिक्षा दी गई है। पर्यावरण संरक्षण व भारतीय संस्कृति परस्पर जुडी है। यहाँ मानव जीवन को हमेशा मूर्त या अमूर्त रूप में पृथ्वी, जल, वायु, आकाश, सूर्य, चन्द्र, नदी, वृक्ष, पशु-पक्षी आदि के साहचर्य में देखा गया है। मानव व प्रकृति के अन्योन्याश्रित संबंध को भारतीय ऋषियों ने बड़ी गहराई से समझा था। यही कारण है कि भारतीय चिंतन में पर्यावरण संरक्षण की अवधारणा उतनी ही प्राचीन है,जितना कि यहां मानव का अस्तित्व रहा है। यहाँ कभी भी प्रकृति के उपादानों को मनुष्य से अलग नहीं देखा गया है। यहां तक कि प्रकृति के अंगों में देवत्य दर्शन की यहाँ सनातन परम्परा रही है, जिसका अपना ठोस दार्शनिक एवं आध्यात्मिक आधार रहा है। भारतीय मनीषियो ने प्रकृति को मातृत्व के रूप में सहज ही स्वीकारोक्ति दी है और स्वयं को इसका पुत्र मानकर इसकी शरण में जाते है।

भारतीय संस्कृति व सभ्यता वनों से ही प्रारंभ हुई। हमारे पूर्वज अध्यात्म के गुरू रहे हैं। ऋषि मुनियों,दार्शनिकों, संतों आदि ने लोकमंगल हेतु चिंतन मनन किया। वनों में ही हमारे विपुल वाङ्मय वेद-वेदांगों, उपनिषद आदि की रचना हुई। अरण्य में लिखे जाने के कारण ग्रन्थ विशेष आरण्यक कहलाये। प्रकृति के विविध स्वरुप को समझते हुए वृक्षायुर्वेद की रचना की गई, जिसका मूल सिद्धांत था आधिदैविक जीवन के महत्व को समझते हुए आधिभौतिक जीवन यापन हेतु प्रकृति का शास्त्रीयविधि से उपभोग करना। हमारे पुरखे कोई भी कार्य करने से पूर्व प्रकृति को पूजते थे –

अश्वत्थो वट वृक्ष चन्दन तरूर्मन्दार कल्पौद्रुमौ ।
जम्बू-निम्ब-कदम्ब आम सरला वृक्षाश्च से श्रीरिणः॥
सर्वे ते फल संयुतः प्रतिदिन विभा जन राजते
रम्यं चैत्ररथंच नन्दनवनं कुर्वन्तु नो मंगलम्॥

वृक्ष पर्यावरण के अभिन्न अंग है – यह हमारी, अज्ञानता है कि हम पूर्ण ढंग से उनके बारे में नहीं जानते हैं।

वनस्पतियों का यही गुण धर्म एवं उनकी सदुपयोगिता उन्हें देवत्व का स्थान प्रदान करती है। जैसे-जैसे मानव अपनी वैज्ञानिक शक्तियों का विकास करता जा रहा है प्रदूषण की समस्या भी बढ़ती जा रही है। यह एक ऐसी समस्या है जिसे किसी विशिष्ट क्षेत्र या राष्ट्र की सीमाओं में बाँधकर नहीं देखा जा सकता। यह विश्वव्यापी समस्या है इसलिये सभी राष्ट्रों का संयुक्त प्रयास ही इस समस्या से मुक्ति पाने में सहायक हो सकता है। कुछ समय पूर्व किये गये वैज्ञानिक विश्लेषण से यह तथ्य प्रकाश में आया है कि इन दिनों पृथ्वी के वायु मंडल में प्राण वायु तेजी से कम होती जा रही है तथा कार्बन डाई आक्साइड, नाइटोजन, हाइड्रोजन आदि बढ रहे हैं। इस स्थिति के लिए बढ़ती हुई यांत्रिक सभ्यता उत्तरदायी है। इस गम्भीर समस्या से मुक्ति हेतु वृक्ष लगाने और वनस्पतियों के संवर्द्धन करने की आवश्यकता पर भी जोर दिया जा रहा है। वर्तमान में मानव ने विकास के नाम पर पर्यावरण का जितना शोषण और विनाश किया है सम्भवतः यह मानव विकास की यात्रा में पहली बार हुआ है। कभी पर्यावरण हमारी संस्कृति का अभिल अंग हुआ करता था। कभी वातावरण की सुरम्यता हमारे एवं जीवों तथा वृक्ष, वनस्पतियों के मध्य संवेदना के गहरे रिश्तों से जुड़ती थी परन्तु वर्तमान में ऐसा नहीं है। वर्तमान में हमारी भोगवादी संकीर्ण मानसिकता ने मानव एवं प्रकृति के बीच सभी सूत्रों को विच्छिल कर दिया है। प्रकृति तो जीवन के विकास का कार्य कर रही थी परन्तु मानव ने उसे विनाश के पथ पर बढ़ने हेतु विवश कर दिया है। प्रकृति कल्याणकारी शिव के साथ-साथ मिलकर मानव के उज्जवल भविष्य की संरचना में जुटी थी परन्तु इसमें कोई दो राय नहीं की उसे प्रलयंकारी रौद्ररूप का त्रिशूल मानव ने ही थमाया है। वर्तमान स्थितियों को देखते हुए कहा जा सकता है कि मानव को अपनी प्रवृत्तियों को बदलना होगा। प्रकृति के सभी घटकों के साथ पूर्ववत स्नेह, सौहार्द, सहयोग एवं साहचर्य संबंधों को एक बार पुन: स्थापित करना होगा।

वर्तमान में विकास को लेकर जो विचारधार प्रवाहमात है वह हमारे ऋषि-मुनियों द्वारा प्रतिपादित धारा की धुर विरोधी है। इसके लिए प्रकृति मात्र भोग का साधन है। प्रकृति के प्रति श्रद्धा सम्मान की बात तो दूर की है, इसको सहज अपने सहयोगिनी औ पूरक सत्ता के रूप में भी देखने समझने की दृष्टि समाज और विश्व के पास नहीं है। कल्याण के प्रति समर्पित ऋषि-मुनियों ने अपने उत्कृष्ट ज्ञान को व्यवहारिक रूप में जनोपयोगी स्वरुप प्रदात कर, स्थायित्व प्रदान करने हेतु अनेक नियम बनाकर उन्हें कर्म का आचरण बनाते हुए शुभ-अशुभ, पाप- पुण्य, स्वर्ग- नरक, धर्म-अधर्म के साथ जोड़ दिया। उनका उद्देश्य था कि समाज का प्रत्येक नागरिक हुन सरल नियमों का पालन करते हुए पारिस्थितिकी को यथावत और सुदृढ़ रखकर स्वविकास करता रहे। यह ऋषि-मुनियों की जन कल्याण की वैज्ञानिक चिंतनधारा थी।

भारतीय दर्शन से प्रेरित होकर पर्यावरण संरक्षण के निम्न उपाय किये जा सकते है-

1.प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण -पृथ्वी, जल, वायु संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग।

2.जैव विविधता का संरक्षण- पेड़-पौधों, पशु-पक्षियों और जीवों की सुरक्षा।

3.पुन: उपयोग, और पुनर्चक्रण- वस्तुओं का पुन: उपयोग और कचरे का पुनर्चक्रण करना।

4. पर्यावरण शिक्षा – प्राचीन ग्रंथों और परम्पराओं से प्रेरणा लेकर लोगों को पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूक और जिम्मेदार बनाना।

5. स्थायी विकास –गांधी जी के विचारों के अनुसार स्थायी विकास से बढ़ावा देना

भारतीय दर्शन में पर्यावरण संरक्षण केवल एक सिद्धान्त नहीं है, बल्कि यह जीवन जीने का तरीका है। यह दर्शन हमें प्रकृति के साथ सामंजस्य स्थापित करने और उसे संरक्षित रखने की शिक्षा देता है। वर्तमान समय में जब पर्यावरण संकट गम्भीर रूप धारण का चुका है, भारतीय दर्शन के आदर्श और शिक्षाएं विश्व को पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने के लिए मार्ग दर्शन कर सकती है। प्राचीन भारतीय परम्पराओं और जीवन शैली को अपनाकर ही हम संतुलित और हरित भविष्य की. कर सकते कल्पना कर सकते है।

निष्कर्ष:

प्रस्तुत शोध के आधार पर यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि भारतीय दर्शन में पर्यावरण संरक्षण की समृद्ध और गहरी परंपरा विद्यमान है। वैदिक काल से लेकर आधुनिक युग तक भारतीय चिंतकों ने प्रकृति और मानव के मध्य सामंजस्यपूर्ण संबंध स्थापित करने के सिद्धांत प्रतिपादित किए हैं। **पहला**, भारतीय दर्शन में प्रकृति को माता, देवी और दिव्य शक्ति के रूप में माना गया है, जो पर्यावरण संरक्षण के लिए एक मजबूत आध्यात्मिक आधार प्रदान करता है। भूमि माता, वृक्ष पूजा, नदी पूजा की परंपराएं इसका प्रमाण हैं। **दूसरा**, पंचमहाभूत सिद्धांत आधुनिक पारिस्थितिकी विज्ञान के सिद्धांतों से गहरा तालमेल रखता है। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश के संतुलन पर आधारित यह दर्शन समग्र पर्यावरणीय दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। **तीसरा**, अहिंसा का सिद्धांत न केवल जीव-जंतुओं बल्कि संपूर्ण प्राकृतिक जगत के संरक्षण का आधार बनता है। जैन और बौद्ध परंपरा में इसका विस्तृत विवेचन मिलता है। **चौथा**, "वसुधैव कुटुम्बकम्" और "सर्वे भवन्तु सुखिनः" जैसे सिद्धांत वैश्विक पर्यावरणीय एकजुटता के लिए दार्शनिक आधार प्रदान करते हैं। ये सिद्धांत आज की जलवायु परिवर्तन की चुनौती से निपटने के लिए अत्यंत प्रासंगिक हैं। **पांचवा**, योग, आयुर्वेद और वास्तु शास्त्र जैसी पारंपरिक विद्याएं पर्यावरण-अनुकूल जीवनशैली को बढ़ावा देती हैं। ये व्यावहारिक दर्शन के रूप में आज भी उपयोगी हैं। **छठा**, भारतीय दर्शन में स्थायी विकास की अवधारणा "तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः" के रूप में हजारों साल पहले से मौजूद है। यह आधुनिक सस्टेनेबल डेवलपमेंट का आधार है।

हालांकि इन सिद्धांतों के व्यावहारिक कार्यान्वयन में चुनौतियां हैं, लेकिन उचित शिक्षा, नीति निर्माण और सामुदायिक प्रयासों के माध्यम से इन्हें पुनर्जीवित किया जा सकता है। आवश्यकता है इन प्राचीन सिद्धांतों को आधुनिक संदर्भ में पुनर्व्याख्यायित करने की। समसामयिक पर्यावरणीय संकट के समाधान में भारतीय दार्शनिक परंपरा का योगदान अमूल्य है। यह न केवल तकनीकी समाधान प्रदान करता है बल्कि मानसिक और आध्यात्मिक परिवर्तन का आधार भी बनता है। "धरती माता" की भावना से प्रेरित होकर ही हम सच्चे अर्थों में पर्यावरण संरक्षण कर सकते हैं। भविष्य के लिए यह आवश्यक है कि हम अपनी समृद्ध दार्शनिक विरासत को पुनः प्राप्त करें और उसे आधुनिक विज्ञान के साथ जोड़कर एक नया पर्यावरणीय दर्शन विकसित करें। यही भारत की विश्व को दी जा सकने वाली सबसे बड़ी देन होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची

[1] पर्यावरण वर्तमान और भविष्य – डॉ० वीरेन्द्र सिंह यादव, राधा पब्लिकेशन्स दरियागंज नई दिल्ली।

[2] पर्यावरण शिक्षा-डॉ. एम. के. गोयल, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा – 2

[3] समाज और पर्यावरण – जगदीश चंद्र पाण्डेय, प्रगति प्रकाशन, जयपुर

[4] पर्यावरण शिक्षा – श्यामसुन्दर पुरोहित, अजन्ता बुक्स, बीकानेर

[5] शिव, वंदना (1988). "स्टेइंग अलाइव: वूमेन, इकोलॉजी एंड डेवलपमेंट", जेड बुक्स, लंदन

[6] गुहा, रामचंद्र (1989). "द अनक्वाइट वुड्स: इकोलॉजिकल चेंज एंड पीजेंट रेजिस्टेंस", ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस

[7] वात्स्यायन, कपिला (1995). "भारतीय कला में प्रकृति चेतना", राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली

[8] चरक संहिता, चौखम्भा संस्कृत संस्थान, वाराणसी

[9] पतंजलि योग सूत्र, स्वामी विवेकानंद अनुवाद

[10] द्विवेदी, आर.एन. (2000). "वैदिक पर्यावरण दर्शन", वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली

Cite this Article:

डॉ ममता शर्मा, "पर्यावरण संरक्षण के सन्दर्भ में भारतीय दर्शन", *Naveen International Journal of Multidisciplinary Sciences (NIJMS), ISSN: 3048-9423 (Online), Volume 1, Issue4, pp. 08-13, Feb-Mar 2025.*

Journal URL: https://nijms.com/

This work is licensed under a Creative Commons Attribution-NonCommercial 4.0 International License.